तत्त्वार्थसूत्रम्

Tattvārthasūtram

दशमोऽध्यायः

Tenth Chapter

तत्त्वार्थसूत्र

दशम अध्याय

मोक्ष तत्त्व का अङ्कन इस चित्र में किया गया है। चित्र के निचले भाग के मध्य में प्रथम शुक्लध्यान द्वारा मोहनीय कर्म का नाश करते दिखाया है, जिसमें तप के द्वारा आग की लपटों से कर्मों की जंजीर टूटते दिखाया है। उसके ऊपर दूसरे शुक्लध्यान द्वारा दर्शनावरण कर्म तथा दायीं तरफ व बायीं तरफ ज्ञानावरण व अन्तराय कर्म का एक साथ (घातिया कर्मों का) नाश करते दिखाया है।

मध्य में घातिया कर्मों के नाश के उपरान्त प्राप्त अर्हंत् अवस्था को दिखाया गया है। उनके ऊपर तीसरे व चौथे शुक्लध्यान को मध्य में अङ्कित किया है, जिससे चार अघातिया कर्मों का नाश करके सिद्ध अवस्था को प्राप्त करते दिखाया है।

चित्र का बाहरी आकार पूर्व के सभी चित्रों की तरह लोकाकार को प्रतिबिम्बित कर रहा है।

तत्त्वार्थसूत्रम्
Tattvārthasūtram

दशमोऽध्यायः
Tenth Chapter

केवलज्ञान की उत्पत्ति का कारण
Cause of manifestation of Omniscience

मोहक्षयाज्ज्ञानदर्शनावरणान्तरायक्षयाच्च केवलम् ।।१।।

(मोह-क्षयात्, ज्ञान-दर्शनावरण-अन्तराय-क्षयात् च केवलम्।)

Mohakṣayājjñānadarśanāvaraṇāntarāyakṣayācca Kevalam. (1)

शब्दार्थ : **मोहक्षयात् –** मोहनीय (कर्म) के क्षय होने से; **ज्ञानदर्शनावरणा-न्तरायक्षयात् च –** ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय (कर्मों) के क्षय होने से; **केवलम् –** केवल (ज्ञान होता है)।

Meaning of Words : **Mohakṣayāt** - by destruction of deluding karma; **Jñānadarśanāvaraṇāntarāyakṣayāc Ca** - by destruction of knowledge obsuring, perception obscuring and obstructive karmas; **Kevalam** - manifests omniscience.

सूत्रार्थ : मोहनीय कर्म के क्षय होने से तथा ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय कर्मों के क्षय होने से केवलज्ञान उत्पन्न होता है।

English Rendering : Omniscience manifests on destruction of deluding karma and thereafter destruction of knowledge obscuring, perception obscuring and obstructive karmas.

टीका : इस सूत्र में केवलज्ञान की उत्पत्ति के कारणों का वर्णन किया जा रहा है। मोहनीय कर्म के अट्ठाईस, ज्ञानावरण कर्म के पाँच, दर्शनावरण कर्म की नौ तथा अन्तराय कर्म की पाँच प्रकृतियों के क्षय होने से और तीन आयु कर्म (नरक आयु, तिर्यञ्च आयु और देव आयु) तथा नाम कर्म की तेरह प्रकृतियों (साधारण शरीर, आतप, पञ्चेन्द्रिय के बिना एकेन्द्रिय आदि चार जाति, नरक गति, नरक गति

प्रायोग्यानुपूर्व्य, स्थावर, सूक्ष्म, तिर्यञ्च गति, तिर्यञ्च गति प्रायोग्यानुपूर्व्य और उद्योत) कुल त्रेसठ प्रकृतियों के क्षय होने से केवलज्ञान उत्पन्न होता है।

भव्य सम्यग्दृष्टि जीव अपने परिणामों की विशुद्धि से असंयत सम्यग्दृष्टि, देशसंयत, प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत गुणस्थानों में से किसी एक गुणस्थान में अनन्तानुबन्धी की चार कषायों का और दर्शन मोहनीय की तीन प्रकृतियों का क्षय करके क्षायिक सम्यग्दृष्टि होता है। पुनः अप्रमत्तसंयत गुणस्थान में अधःकरण परिणामों को प्राप्त कर क्षपक श्रेणि पर चढ़ने के अभिमुख होता हुआ अपूर्वकरण के प्रयोग से अपूर्वकरण गुणस्थान को प्राप्त कर, विशुद्ध परिणामों से पाप कर्मों की स्थिति और अनुभाग को कम करता है और शुभ कर्मों के अनुभाग को बढ़ाता है। पुनः अनिवृत्तिकरण परिणामों से अनिवृत्ति बादर साम्पराय गुणस्थान को प्राप्त कर अप्रत्याख्यानावरण चार कषाय, प्रत्याख्यानावरण चार कषाय, नपुंसक वेद, स्त्री वेद को नष्ट करने व हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा रूप छह नो-कषायों को पुरुष वेद में सङ्क्रमित करके नष्ट करने, एवं पुरुष-वेद, सञ्ज्वलन क्रोध, मान और माया एवं लोभ का बादर कृष्टि (परिणामों के द्वारा सञ्ज्वलन कषाय के पूर्व एवं अपूर्व स्पर्धकों के अनुभाग के एक-एक अविभाग प्रतिच्छेद वाले परमाणुओं के समूह रूप जो वर्गणाओं के समूह रूप होते हैं, उनको अनन्तगुणा घटाता हुआ अनुभाग होकर स्थूल-स्थूल खण्ड करने को बादर कृष्टिकरण कहते हैं। बादर कृष्टियों में से प्रत्येक कृष्टिगत स्थूल खण्ड का अनन्तगुणा अनुभाग घटकर सूक्ष्म-सूक्ष्म खण्ड करने को सूक्ष्म कृष्टिकरण कहते हैं।) द्वारा क्रमशः सूक्ष्म करके एवं फिर लोभ सञ्ज्वलन को कृश करके सूक्ष्मसाम्पराय क्षपक गुणस्थान को प्राप्त करता है। पुनः मोहनीय कर्म का पूर्णतः क्षय करके क्षीणकषाय गुणस्थान को प्राप्त कर इस गुणस्थान के उपान्त्य समय में निद्रा और प्रचला प्रकृतियों का क्षय करके, एवं अन्त्य समय में पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तराय कर्मों का क्षय करके जीव सयोगकेवली सञ्ज्ञक तेरहवें गुणस्थान में पहुँचकर केवलज्ञान और केवलदर्शन को प्राप्त करता है।

Comments : In this Sūtra, description of the means of manifestation of omniscience is given. Omniscience manifests on destruction of twenty eight sub-kinds of deluding karma, five of knowledge obscuring, nine of perception obscuring and five of obstructive karmas and three sub-kinds of age determining karma (of celestial, Tiryañca & infernal beings) and thirteen of Nāma karma (i.e. Sādhāraṇa Śarīra, Ātapa, four classes up to four sense beings, life-course of hell, Narakagatiprāyogyānupūrvya, Sthāvara, Sūkṣma, Tiryañca Gati, Tiryañca

Gatiprāyogyānupūrvya and Udyota) - thus total sixty three kinds of nature of karmas.

A soul capable of attaining salvation, by its purity of thoughts attains any one of the four stages of spiritual development i.e. a right believer without any vows, keeping partial vows, Great Vows with passions and keeping Great Vows without any passions, destroys four sub-kinds of Anantānubandhī passions and three kinds of Darśana Mohanīya karma and then gains status of a destructive right believer. Again with psychic purity in the perfect self control stage (i.e. Apramatta) when ready to ascend the ladder with Adhaḥkaraṇa disposition, experiencing Apūrvakaraṇa volitions reduces the duration and potentiality of demerit karmas and increases that of merit karmas by attaining the Apūrvakaraṇa stage of spiritual development. And through the attainment of advanced thought-activity, he ascends the stage of Anivṛttibādarasāmparāya of spiritual development, destroys four passions each of Apratyākhyānavaraṇa and Pratyākhyānavaraṇa and then the neutral sex and the female sex. Further he destroys the six quasi-passions of laughter, liking, disliking, sorrow, fear and disgust by attaching them to the male sex, male sex to the gleaning anger, gleaning anger to the gleaning pride, the gleaning pride to the gleaning deceitfulness, the gleaning deceitfulness to the gleaning greed and gradually annihilating them by the method of gigantic kārmic emaciation i.e. Bādara Kṛṣṭi. Kṛṣṭikaraṇa is gradual destruction of Sañjvalana kind of passions. In this process, as a result of pure volitions of soul, every non-divisible group of Spardhakas having some specific potency of fruition is emaciated in to several gross parts of Smardhakas with decreased potency of fruition. This is known as Bādara Kṛṣṭikarana. Bādara Kṛṣṭies are further emaciated in to subtle parts of infinitely reduced potency. This is called subtle Kṛṣṭikaraṇa. And the self mitigates the gleaning greed, experiences the tenth stage of subtle greed in the destructive ladder and destroys the entire deluding karmas without a trace. Having cast off the burden of the deluding karmas, he ascends the twelfth stage of Kṣīṇakaṣāya i.e. delusionlessness. In the last but one instant of the twelfth stage, sleep and deep-sleep are destroyed and in the last instant, the five sub-kinds of knowledge-obscuring, four sub-kinds of perception-obscuring and five sub-kinds of obstructive karma & are destroyed and immediately thereafter one attains omniscience and omni-perception.

मोक्ष का लक्षण
Characteristics of Salvation

बन्धहेत्वभावनिर्जराभ्यां कृत्स्नकर्मविप्रमोक्षो मोक्षः।।२।।

(बन्धहेतु-अभाव-निर्जराभ्यां कृत्स्न-कर्म-विप्र-मोक्षः मोक्षः।)

Bandhahetvabhāvanirjarābhyāṁ Kṛtsnakarma-vipramokṣo Mokṣaḥ. (2)

शब्दार्थ : **बन्धहेत्वभावनिर्जराभ्याम् –** बन्ध के हेतुओं का अभाव और निर्जरा के द्वारा; **कृत्स्नकर्मविप्रमोक्षः –** सम्पूर्ण कर्मों का आत्यन्तिक क्षय होना, **मोक्षः –** मोक्ष (है)।

Meaning of Words : **Bandhahetvabhāvanirjarābhyām** - by the absence of the cause of bondage and with functioning of the dissociation of karmas; **Kṛtsnakarmavipramokṣaḥ** - annihilation once & for all karmas; **Mokṣaḥ** - liberation/salvation is attained.

सूत्रार्थ : बन्ध के हेतुओं का अभाव और निर्जरा के द्वारा सम्पूर्ण कर्मों का आत्यन्तिक क्षय होना ही मोक्ष है।

English Rendering : Owing to the absence of causes of bondage and due to dissociation of karmas, the annihilation of all karmas once for all, is libration/salvation state.

टीका : भव्य सम्यग्दृष्टि जीव जिस प्रकार से बारहवें गुणस्थान तक अपने त्रेसठ कर्मों का क्षय प्राप्त कर केवलज्ञान प्राप्त करता है, उसका कथन पूर्व सूत्र की टीका में किया गया है। सयोगकेवली गुणस्थान में किसी भी प्रकृति का क्षय नहीं होता। अयोगकेवली गुणस्थान के उपान्त्य (द्विचरम) समय में अनुदयरूप कोई एक वेदनीय, देव गति, पाँच शरीर, पाँच बन्धन, पाँच सङ्घात, छह संस्थान, तीन शरीर सम्बन्धी अङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, पाँच प्रशस्त एवं अप्रशस्त वर्ण, दो गन्ध, पाँच प्रशस्त एवं अप्रशस्त रस, आठ स्पर्श, देव गति प्रायोग्यानुपूर्व्य, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास, प्रशस्त और अप्रशस्त विहायोगति, अपर्याप्तक, प्रत्येक शरीर, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, दुर्भग, सुस्वर, दुःस्वर, अनादेय, अयशःकीर्ति, निर्माण और नीच गोत्र – इन बहत्तर प्रकृतियों का क्षय होता है। अन्त्य समय में उदयगत शेष एक वेदनीय, मनुष्य आयु, मनुष्य गति, मनुष्य गति प्रायोग्यानुपूर्व्य, पञ्चेन्द्रिय जाति, त्रस,

बादर, पर्याप्त, सुभग, आदेय, यशःकीर्ति, तीर्थङ्कर और उच्च गोत्र – इन तेरह प्रकृतियों का क्षय होता है।

कुल आठ मूल कर्म प्रकृति सम्बन्धी उत्तर प्रकृतियाँ एक सौ अड़तालीस हैं। उनमें से चरम शरीरी जीव के नरक आयु, तिर्यञ्च आयु और देव आयु का सत्त्व नहीं होता है। आहारक चतुष्क और तीर्थङ्कर प्रकृति का सत्त्व किसी के होता है और किसी के नहीं होता। इनके सिवाय शेष प्रकृतियों का सत्त्व नियम से होता है। यह जीव गुणस्थान क्रम से बन्ध के हेतुओं का अभाव करता है, इसलिये क्रम से नूतन बन्ध का अभाव हो जाता है और सत्ता में स्थित प्राचीन कर्म प्रकृतियों का परिणाम विशेष से क्षय करता जाता है। इसलिये सत्ता में स्थित कर्मों का अभाव होता जाता है। और अन्त में सब कर्मों का क्षय हो जाने से यह जीव मुक्त हो जाता है। यहाँ मोक्ष शब्द का प्रयोग कर्म, नो–कर्म और भावकर्म के वियोग अर्थ में किया गया है।

Comments : In the comments of previous Sūtra, description is given of a capable right believer destroying sixty three kinds of karmas up to twelfth stage of spiritual development and then attaining omniscience. In the Sayogakevalī stage, none of the karma-kinds is destroyed. In last but one Samaya of the Ayogakevalī sub-kinds of karmas are destroyed. These are one of the two feeling karmas, the celestial stage of existence, the five bodies, the five bindings, the five conglomerations, the six body-structures, the chief and secondary parts of three kinds of bodies, six firmness of joints, five auspicious - inauspicious complexions, two odours, five tastes, eight touches, transmigrating force towards celestial state of existence, neither heavy nor light, self-annihilation, destruction by others, respiration, pleasant & unpleasant gait, incomplete development, individual body, firmness of the frame, infirm frame, beauty, ugliness, repulsive personality, melodious voice, ill-sounding voice, lusterless body, dishonour & shame, formation of the body and low family status. and the remaining thirteen karmas are destroyed in the last instant of the fourteenth stage. These are one of the two feeling karmas, human life time, the human state of existence, birth as a being with five senses, tendency towards human state of existence, mobile body, gross body, complete development winning personality, lusterous body, honour & glory, Tīrthaṅkara and high family status.

There are one hundred & forty eight sub-kinds of the eight main

kinds of karmas. Out of these, age of infernal being, age of Tiryañca and that of the celestial being do not exist in those who have their last birth i.e. those who are destined to get liberation. Some such beings possess four types of Āhāraka body related karmas and Tīrthaṅkara Nāma karma and others do not. Except these, all other karma types are present in, all beings as a rule. No new karmas flow in owing to the absence of causes in successive stages of spiritual development due to absence of means for bondage and as a result of increased psychical purity, dissociation of bound karma continues. Therefore, there is decreasing existence of the bound karmas and in the last, the soul attains liberation on destruction of all karmas. Here the word 'Mokṣa' is used to cover desruction of all physical karmas, No-karmas and psychical karmas.

मोक्ष में भावों का अभाव
Absence of psychic factors in Salvation

औपशमिकादिभव्यत्वानां च।।३।।

(औपशमिक–आदि–भव्यत्वानां च।)

Aupaśamikādibhavyatvānāṁ Ca. (3)

शब्दार्थ : **औपशमिकादि –** औपशमिक आदि; **भव्यत्वानाम् –** भव्यत्व भावों का; **च –** और (अभाव होना)।

Meaning of Words : **Aupaśamikādi -** subsidential thought activity etc.; **Bhavyatvānām -** of the capacity of being liberated; **Ca -** and (destruction of psychic factors).

सूत्रार्थ : और औपशमिक आदि भावों तथा भव्यत्व भावों के अभाव होने से मोक्ष होता है।

English Rendering : One attains liberation after attaining absence of subsidential thought activity and absence of the potentiality of being liberated.

टीका : औपशमिक, औदयिक, क्षायोपशमिक और भव्यत्व रूप पारिणामिक इन चार भावों के क्षय से मोक्ष होता है। 'च' शब्द का अर्थ है कि केवल द्रव्य कर्म

के क्षय से ही मोक्ष नहीं होता, उनके क्षय के लिये भाव कर्मों का क्षय आवश्यक है। पारिणामिक भावों में से केवल भव्यत्व का ही क्षय होता है, जीवत्व, वस्तुत्व, अमूर्तत्व आदि का नहीं। मोक्ष में अभव्यत्व के क्षय का तो प्रश्न ही नहीं, क्योंकि मोक्ष तो भव्यत्व के साथ ही होता है।

Comments : The liberation is attained on destruction of four psychical karmas - subsidential, operational, subsidential cum-destructive and natural instinct of worthiness of salvation. The world 'Ca' indicates that salvation does not take place merely by destroying physical karma particles but it is also necessary to destroy psychical karma volitions. Out of the natural instinct karmas, only worthiness for salvation is destroyed and not of consiousness (Jīvatva), existence nature (Vastutva), non-corporalty (Amūrtatva) etc. There is no question of destroying non-worthiness for salvation (Abhavyatva) as liberation is attained only with worthiness for salvation (Bhavyatva).

मोक्ष में रहने वाले भाव
Continuation of psychic thoughts after salvation

अन्यत्र केवलसम्यक्त्वज्ञानदर्शनसिद्धत्वेभ्यः।।४।।

(अन्यत्र केवलसम्यक्त्व-ज्ञान-दर्शन-सिद्धत्वेभ्यः।)

Anyatra Kevalasamyaktvajñānadarśanasiddhatvebhyaḥ. (4)

शब्दार्थ : **अन्यत्र –** इनके अतिरिक्त; **केवलसम्यक्त्वज्ञानदर्शनसिद्धत्वेभ्यः –** केवलसम्यक्त्व, केवलज्ञान, केवलदर्शन तथा सिद्धत्व।

Meaning of Words : **Anyatra** - other than; **Kevalasamyaktvajñānadarśanasiddhatvebhyaḥ** - perfect Right Belief, omniscience, omniperception and liberated state.

सूत्रार्थ : इनके अतिरिक्त मोक्ष में केवलसम्यक्त्व, केवलज्ञान, केवलदर्शन तथा सिद्धत्व का अभाव नहीं होता।

English Rendering : All other things are absent in liberation except Perfect Right Belief, Omniscience, Omniperception and salvated status.

टीका : सिद्धों के चार भाव केवलसम्यक्त्व, केवलज्ञान, केवलदर्शन और सिद्धत्व रहते हैं। सिद्धों में सामान्यरूप से अनन्तवीर्य आदि भी पाये जाते हैं, क्योंकि वे ज्ञान और दर्शन के अविनाभावी होते हैं। जीव के केवलज्ञान आदि अनन्तवीर्य रहित नहीं हो सकते। सिद्धों के आत्मप्रदेश चरम शरीर के आकार में विद्यमान रहते हैं।

Comments : Liberated souls possess four volitions of perfect/ infinite right faith, omniscience, omniperception and supremacy (salvated status) (Siddhatva). Infinite energy also remains in liberated souls as it is concomitant with knowledge and perception. In absence of infinite energy, a soul cannot attain omniscience etc. The space points of the liberated soul retains the shape of their last body.

कर्मक्षय के बाद आत्मा का ऊर्ध्वगमन
Upward movement of Soul after total dissociation of karmas

तदनन्तरमूर्ध्वं गच्छत्या लोकान्तात् ।।५।।

(तत् अनन्तरम् ऊर्ध्वं गच्छति आ लोकान्तात्।)

Tadanantaramūrdhvaṁ Gacchatyā Lokāntāt. (5)

शब्दार्थ : **तदनन्तरम् –** उसके अनन्तर; **ऊर्ध्वम् –** ऊपर; **गच्छति आ – लोकान्तात्** – लोक के अन्त तक जाता है।

Meaning of Words : **Tadanantaram** - after that; **Ūrdhvam** - upward; - **Gacchati Ā Lokāntāt** - goes up to the end of Loka i.e. universe.

सूत्रार्थ : तदनन्तर मुक्त जीव लोक के अन्त तक ऊपर जाता है।

English Rendering : After that, the liberated soul moves upwards upto the end of Loka i.e. universe.

टीका : जीव का ऊर्ध्वगमन स्वभाव होने के कारण सभी कर्मों से मुक्त जीव लोकाकाश में सर्वत्र धर्मद्रव्य व्याप्त होने से लोक के अन्त तक गमन करता है।

Comments : Owing to the nature of upward movement of a soul, on release from all karmas, the soul moves upto the end point of Loka (universe) where Dharma Dravya is found.

मुक्त जीवों के ऊर्ध्वगमन के कारण

Reasons of upward movement of liberated Soul

पूर्वप्रयोगादसङ्गत्वाद्बन्धच्छेदात्तथागतिपरिणामाच्च।।६।।

(पूर्व–प्रयोगात् असङ्गत्वात् बन्धच्छेदात् तथागति–परिणामात् च।)

Pūrvaprayogādasaṅgatvādbandhacchedāttathāgati-pariṇāmācca. (6)

शब्दार्थ : **पूर्वप्रयोगात्–** पूर्व के प्रयोग से; **असङ्गत्वात् –** (कर्म के) सङ्ग से रहित हो जाने से; **बन्धच्छेदात् –** बन्ध के छेद हो जाने से; **तथागतिपरिणामात्** – तथागति परिणाम यानी ऊर्ध्वगमन का स्वभाव होने से; **च –** और (मुक्त जीव ऊर्ध्वगमन करता है)।

Meaning of Words : **Pūrvaprayogāt -** by previous practice; **Asaṅgatvāt** - non-association (of karmas); **Bandhacchedāt -** because of bondage (of karma) being broken, **Tathāgatipariṇāmāt-** due to nature of upward motion; **Ca -** and (the liberated soul moves upwards).

सूत्रार्थ : पूर्व के प्रयोग से, कर्मों के सङ्ग से रहित हो जाने से, बन्ध का छेद हो जाने से और ऊर्ध्वगमन का स्वभाव होने से मुक्त जीव ऊर्ध्वगमन करता है।

English Rendering : As a result of previous practice, non-assocation of karmas, bondage of karmas being shattered and nature of upward movement, the liberated soul moves upwards.

टीका : संसारी जीव ने मुक्त होने से पहले कई बार मोक्ष की प्राप्ति के लिये प्रयत्न किया है। अतः पूर्व का संस्कार रहने से जीव ऊर्ध्वगमन करता है। जीव जब तक कर्मों के भार से सहित होता है तब तक संसार में चारों गतियों में गमन करता है, लेकिन कर्मों के भार से रहित हो जाने पर अपने ऊर्ध्वगमन स्वभाव के कारण मुक्त होने पर लोक के अन्त तक ऊर्ध्वगमन करता है।

Comments : The mundane soul has made several efforts in the previous life-existence prior to attainment of liberation for salvation.

As such, owing to previous instincts, it moves upwards. So long as the Jīva is burdened with karma weight, it transmigrates in the four life-courses but when released from karmic burden due to its nature of upward movement, it goes up to the end of universe.

ऊर्ध्वगमन के तुलनात्मक उदाहरण
Comparative examples for upward movement

आविद्धकुलालचक्रवद्–
व्यपगतलेपालाबुवदेरण्डबीजवदग्निशिखावच्च ।।७।।

(आविद्ध–कुलाल–चक्रवत् व्यपगत–लेप–अलाबुवत्
एरण्डबीजवत् अग्निशिखावत् च।)

Āviddhakulālacakravad-
Vyapagatalepālābuvaderaṇḍabījavadagniśikhāvacca. (7)

शब्दार्थ : **आविद्धकुलालचक्रवत् –** घुमाये गये कुम्भकार के चाक के समान; **व्यपगतलेपालाबुवत् –** लेप से रहित तुम्बी के समान; **एरण्डबीजवत् –** एरण्ड के बीज के समान; **अग्निशिखावत् च –** और अग्नि की शिखा के समान।

Meaning of Words : **Āviddhakulālacakravat** - like potters circling wheel; **Vyapagatalepālābuvat** - like gourd without mud application; **Eraṇḍabījavat** - like the seed of the castor bean; **Agniśikhāvat Ca** - and like flame of candle fire.

सूत्रार्थ : घुमाये गये कुम्भकार के चाक के समान, लेप रहित तुम्बी के समान, एरण्ड के बीज के समान और अग्नि की शिखा के समान जीव ऊर्ध्वगमन करता है।

English Rendering : The soul (in the free state) moves upward like potters circling wheel, like gourd without coating of mud, like the seed of castor bean and the flame of candle fire.

टीका : पूर्व सूत्र में जो मुक्त जीव के ऊर्ध्वगमन के हेतु बताये गये हैं, उन्हें इस सूत्र द्वारा क्रमशः दृष्टान्त देकर समझाया गया है। 'पूर्वप्रयोगात्' – इसके लिये

कुम्भकार के चक्र का उदाहरण दिया गया है कि जिस प्रकार चाक के घुमा देने पर चक्र पूर्व संस्कारवश घूमता रहता है, उसी प्रकार मुक्त जीव पूर्व संस्कार से ऊर्ध्वगमन करता है, जिसका प्रयत्न उस जीव ने पूर्व में कई बार किया है। 'असङ्गत्वात्' पद के लिये लेप-रहित तुम्बी का उदाहरण दिया गया है कि जिस प्रकार लेप छूट जाने पर तुम्बी जल के ऊपर आ जाती है, उसी प्रकार आत्मा कर्म से रहित होने पर ऊपर की ओर गमन करती है। 'बन्धच्छेदात्' के लिये एरण्ड के बीज का उदाहरण दिया गया है कि जैसे एरण्ड की फली को तोड़कर उसका बीज ऊपर की ओर जाता है, वैसे ही आत्मा कर्म से रहित होने पर ऊर्ध्व दिशा की ओर गमन करती है। 'तथागति-परिणामात्' से जैसे वायु रहित अग्नि की ज्वाला स्वभाव से ऊपर को जाती है, वैसे ही कर्म के भार से मुक्त आत्मा स्वभाव से ऊर्ध्व की ओर गमन करती है।

Comments : The causes for upward movement of the liberated soul as described in the previous Sūtra are illustrated by respective examples in this Sūtra. 'Pūrvaprayogātat' for this, example of potter's wheel is given that potter's wheel continues to revolve due to its previous impetus even when operational forces are removed. Similarly the liberated soul moves upwards because of previous attempts made several times in earlier life-courses. 'Asaṅgatvāt' is illustrated by an example of a gourd without a clay coating. When the clay coating on a gourd is washed off by water, the gourd comes up on the surface of water. In the sameway, soul free from karmas moves upwards. For 'Bandhacchedātat', example of castor-seed is given that on breaking loose, the castor-seed bursts out and moves up. Similarly, soul on getting freedom from karmas moves upwards. By 'Tathāgatipariṇāmāt' term, example of flame of fire is given. In absence of flow of wind blow, flame of fire goes upwards due to its nature. Similarly, soul freed from karma burden moves upwards due to its nature.

मुक्त जीव लोकाकाश के बाहर नहीं जाते
Liberated Souls do not go outside Lokākāśa

धर्मास्तिकायाभावात् ।।८।।

(धर्मास्तिकाय-अभावात्।)

Dharmāstikāyābhāvāt. (8)

शब्दार्थ : **धर्मास्तिकाय –** धर्मास्तिकाय; **अभावात् –** अभाव (होने) से।

Meaning of Words : **Dharmāstikāya** - Dharmāstikāya; **Abhāvāt** - absence of.

सूत्रार्थ : धर्मास्तिकाय रूप धर्म द्रव्य का अभाव होने के कारण मुक्त जीव का लोकाकाश के बाहर गमन नहीं होता।

English Rendering : Due to absence of Dharmāstikāya in the form of Dharma Dravya, the liberated soul does not go beyond Lokākāśa i.e. universe.

टीका : जीव और पुद्गलों के गमन के लिये धर्म द्रव्य का होना आवश्यक है। अलोकाकाश में धर्म द्रव्य का अभाव है। इसलिये मुक्त होने पर जीव अपने ऊर्ध्वगमन स्वभाव के कारण लोकाकाश के अन्त तक ही गमन करता है।

Comments : For movement of living ones and pudgalas (matter), the presence of Dharma Dravya is essential. Dharma Dravya is absent in Alokākāśa (beyond universe). Therefore, owing to its nature for upward movement, the liberated soul moves only up to the end of universe.

मुक्त आत्माओं के व्यवहार से भेद
Kinds of liberated Souls from practical View-points

क्षेत्रकालगतिलिङ्गतीर्थचारित्रप्रत्येकबुद्धबोधितज्ञानावगाहनान्तर–सङ्ख्याल्पबहुत्वतः साध्याः।।९।।

(क्षेत्र–काल–गति–लिङ्ग–तीर्थ–चारित्र–प्रत्येकबुद्ध–बोधित–ज्ञान–अवगाहन–अन्तर–सङ्ख्या–अल्पबहुत्वतः साध्याः।)

Kṣetrakālagatiliṅgatīrthacāritrapratyekabuddhabodhita-jñānāvagāhanāntarasaṅkhyālpabahutvataḥ Sādhyāḥ. (9)

शब्दार्थ : **क्षेत्रकालगतिलिङ्गतीर्थचारित्रप्रत्येकबुद्धबोधितज्ञानावगाह–नान्तरसङ्ख्याल्पबहुत्वतः –** क्षेत्र, काल, गति, लिङ्ग, तीर्थ, चारित्र, प्रत्येक–बुद्ध, बोधित–बुद्ध, ज्ञान, अवगाहना, अन्तर, सङ्ख्या और अल्पबहुत्व से; **साध्याः –** साध्य (हैं)।

Meaning of Words : **Kṣetrakālagatiliṅgatīrthacāritrapratyekabuddhabodhitajñānāvagāhanāntarasaṅkhyālpabahutvataḥ** - region, time, state, sex gender, type of Arhata, conduct, self-enlightenment, enlightened by others, knowledge, stature, difference or interval, number and reciprocal comparision; **Sādhyāḥ** - can be differentiated.

सूत्रार्थ : क्षेत्र, काल, गति, लिङ्ग, तीर्थ, चारित्र, प्रत्येक-बुद्ध, बोधित-बुद्ध, ज्ञान, अवगाहना, अन्तर, सङ्ख्या और अल्पबहुत्व से सिद्धों में भेद किये जाने योग्य हैं।

English Rendering : Liberated beings can be differentiated based on region, time, state, sex-gender, type of Arhata, conduct, self enlightenment, enlightened by others, knowledge, stalture, interval, number and reciprocal comparision.

टीका : क्षेत्र की अपेक्षा वर्तमान को ग्रहण करने वाले नय की अपेक्षा से जीव की सिद्धि क्षेत्र, आत्मा के अपने प्रदेश अथवा आकाश प्रदेश क्षेत्र में सिद्धि होती है और अतीत को ग्रहण करने वाले नय से आकाश के प्रदेशों में सिद्धि होती है। साथ ही जन्म की अपेक्षा पन्द्रह कर्मभूमियों में सिद्धि होती है और संहरण की अपेक्षा मनुष्य क्षेत्र में सिद्धि होती है। संहरण दो प्रकार से होता है – स्वकृत और परकृत। चारण विद्याधरों को स्वकृत संहरण होता है तथा देव आदि के द्वारा किया गया अन्य मुनियों का संहरण परकृत संहरण है। देव आदि पूर्व वैर के कारण किसी मुनि को उठाकर किसी द्वीप या समुद्र आदि में डाल देते हैं, इसी को संहरण या हरण कहते हैं। जिस क्षेत्र में जन्म लिया हो उसी क्षेत्र से सिद्धि होने को जन्म-सिद्धि कहते हैं। किसी दूसरे क्षेत्र में जन्म लेकर संहरण होने से अन्य क्षेत्र में सिद्धि होने को संहरण-सिद्धि कहते हैं।

काल की अपेक्षा वर्तमानग्राही नय से जीव की एक समय में सिद्धि होती है। अतीतग्राही नय से जन्म की अपेक्षा सामान्य रूप से उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी काल में उत्पन्न हुआ जीव सिद्धि को प्राप्त होता है और विशेष रूप से अवसर्पिणी काल के सुषमा-दुःषमा रूप तृतीय काल के अन्त में और दुःषमा-सुषमा रूप चौथे काल में उत्पन्न हुआ जीव सिद्धि को प्राप्त होता है। और चौथे काल में उत्पन्न हुआ जीव चौथे तथा पाँचवें काल रूप दुःषमा काल में भी सिद्धि को प्राप्त होता है। लेकिन पाँचवें काल में उत्पन्न हुआ जीव सिद्धि को प्राप्त नहीं होता। तथा अन्य कालों में उत्पन्न हुआ

जीव भी मुक्ति को प्राप्त नहीं होता। संहरण की अपेक्षा उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी के सभी समयों में - कालों में सिद्धि होती है। गति की अपेक्षा वर्तमानग्राही नय से सिद्धि गति एवं अतीतग्राही नय से मनुष्य गति में सिद्धि होती है। लिङ्ग की अपेक्षा वर्तमानग्राही नय से वेद के अभाव में सिद्धि होती है। अतीतग्राही नय से तीनों भाव वेदों से सिद्धि होती है। द्रव्य वेद की अपेक्षा केवल पुं-वेद से ही सिद्धि होती है। अथवा निर्ग्रन्थ लिङ्ग से सिद्धि होती है। तीर्थ की अपेक्षा कोई तीर्थङ्कर होकर सिद्धि को प्राप्त होते हैं और कोई सामान्य केवली होकर सिद्धि को प्राप्त होते हैं। सामान्य केवली भी या तो कोई तीर्थङ्कर के रहने पर अथवा तीर्थङ्कर के मोक्ष चले जाने पर सिद्धि को प्राप्त होते हैं।

चारित्र की अपेक्षा नाम रहित चारित्र से या यथाख्यात चारित्र से अथवा चार या पाँच प्रकार के चारित्रों से सिद्धि होती है। कोई स्वयं संसार से विरक्त होकर प्रत्येक-बुद्ध होकर सिद्धि होते हैं और कोई दूसरे के उपदेश से विरक्त होकर बोधित-बुद्ध होकर सिद्धि को प्राप्त होते हैं।

ज्ञान की अपेक्षा केवलज्ञान से सिद्धि होती है और मति, श्रुत आदि दो, तीन या चार ज्ञानों से भी सिद्धि होती है। इससे तात्पर्य यह है कि केवलज्ञान होने के पूर्व व्यक्ति को दो, तीन या चार ज्ञान हो सकते हैं।

शरीर की ऊँचाई को अवगाहना कहते हैं। अवगाहना के दो भेद हैं - उत्कृष्ट और जघन्य। सिद्ध को प्राप्त होने वाले जीवों की उत्कृष्ट अवगाहना सवा पाँच सौ धनुष है और जघन्य अवगाहना साढ़े तीन अरत्नि हैं। (कोश ग्रन्थों में कुहनी से लेकर क्रमशः बन्द मुष्टि तक को 'रत्नि', कनिष्ठा अङ्गुलि तक को 'अरत्नि' एवं मध्यमा अङ्गुलि तक के माप को 'हस्त' माना गया है।) जो जीव सोलहवें वर्ष में सात हाथ शरीर वाला होता है वह गर्भ से आठवें वर्ष में साढ़े तीन हाथ शरीरवाला होता है और उस जीव की मुक्ति होती है। मध्यम अवगाहना के अनेक भेद हैं।

यदि जीव लगातार सिद्धि को प्राप्त होते रहें तो जघन्य दो समय और उत्कृष्ट आठ समय का अनन्तर होगा। अर्थात् इतने समय तक सिद्धि को प्राप्त होते रहेंगे और सिद्धि होने में व्यवधान आ जावे तो जघन्य से एक समय और उत्कृष्ट से छह मास का अन्तर होगा।

सङ्ख्या की अपेक्षा एक समय में एक जीव सिद्ध होता है और उत्कृष्ट से एक समय में एक सौ आठ जीव सिद्ध होते हैं।

क्षेत्र आदि में सिद्ध होने वाले जीवों की परस्पर में कम या अधिक सङ्ख्या को अल्पबहुत्व कहते हैं। क्षेत्र की अपेक्षा अल्पबहुत्व वर्तमानग्राही नय से सब जीव सिद्धि क्षेत्र में सिद्ध होते हैं, अतः उनमें अल्पबहुत्व नहीं है। भूतपूर्व नय की अपेक्षा उनमें अल्पबहुत्व इस प्रकार हैं –

क्षेत्र–सिद्ध दो प्रकार के होते हैं – जन्म से और संहरण से। संहरण–सिद्ध अल्प हैं और जन्म–सिद्ध उनसे सङ्ख्यात गुणे हैं।

क्षेत्र के कई भेद हैं – कर्मभूमि, अकर्मभूमि, समुद्र, द्वीप, ऊर्ध्वलोक, अधोलोक और तिर्यग्लोक। सामान्य रूप से उनमें से ऊर्ध्वलोक सिद्ध अल्प हैं, अधोलोक सिद्ध इनसे सङ्ख्यात गुणे हैं और तिर्यग्लोक सिद्ध इनसे सङ्ख्यात गुणे हैं। समुद्र–सिद्ध सबसे कम हैं और द्वीप–सिद्ध इनसे सङ्ख्यात गुणे हैं। विशेष रूप से लवणोदधि–सिद्ध सबसे अल्प हैं। कालोदधि सिद्ध इनसे सङ्ख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार इनसे जम्बूद्वीप–सिद्ध, धातकीखण्ड द्वीप सिद्ध और पुष्करार्द्ध द्वीप सिद्ध क्रमशः सङ्ख्यातगुणे–सङ्ख्यातगुणे अधिक हैं। काल की अपेक्षा अल्पबहुत्व जीव एक समय में सिद्ध होते हैं, अतः अल्पबहुत्व नहीं है। अतीतग्राही नय से उत्सर्पिणी काल में सिद्ध होने वाले अल्प हैं और अवसर्पिणी काल में सिद्ध होने वाले इनसे कुछ अधिक हैं।

गति की अपेक्षा अल्पबहुत्व वर्तमानग्राही नय से सब सिद्धगति में सिद्ध होते हैं, अतः अल्पबहुत्व नहीं है। अतीतग्राही नय से भी अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि सब मनुष्य गति से सिद्ध होते हैं।

जिस गति से मनुष्य गति में आकर मोक्ष प्राप्त किया हो, ऐसी एकान्तर गति की अपेक्षा अल्पबहुत्व इस प्रकार है – तिर्यञ्च गति वाले अल्प हैं। मनुष्य गति वाले इनसे सङ्ख्यात गुणे हैं। नरक गति सिद्ध इनसे सङ्ख्यात गुणे हैं और देव गति सिद्ध इनसे सङ्ख्यातगुणे हैं।

वेद की अपेक्षा वर्तमान ग्राही नय से सब अवेद से सिद्ध होते हैं। अतः अल्प–बहुत्व नहीं है। अतीतग्राही नय से भाव वेद की अपेक्षा नपुंसक वेद से सिद्ध सबसे कम हैं। स्त्री वेद सिद्ध उनसे सङ्ख्यात गुणे हैं। और पुरुष–वेद सिद्ध इनसे सङ्ख्यात गुणे हैं। कहा भी है – ''नपुंसक वेद वाले बीस, स्त्री वेद वाले चालीस और पुरुष वेद वाले अड़तालीस जीव सिद्ध होते हैं।''

इसी प्रकार तीर्थ, चारित्र आदि की अपेक्षा से भी अल्पबहुत्व को जाना जा सकता है।

Comments : From the standpoint of the present, liberation is attained in one's own spatial points of soul, when considered in the context of the region. From the standpoint denoting the past, liberation is attained from the spatial points of soul. In the context of birth, the liberation is attained in the fifteen continents of action realm i.e. 'Karma Bhūmi' and in the context of transportation, liberation is attained in the human region. Transportation is of two kinds - by ownself and by others. Vidyādharas having power of space-movement may transport themselves and transportation of monks by other celestial beings etc. is 'by others'. Celestial beings etc. owing to their previous enmity may lift and dump a monk in some ocean or continent. This is known as 'Saṁharaṇa' or 'Haraṇa'. Those who attain liberation in the region they are born, are known as 'Janmasiddhi', owing to transportation, when liberation is attained from other region other than where born, those monks are known as 'Saṁharaṇasiddhi'.

In the context of time, from the stand point of the present, a monk attains liberation in one instant. From the stand point of the past, in general, one who is born in ascending or descending cycles of time attains liberation. Particularly speaking, one who is born in the last part of the third period 'Suṣamā-duḥṣamā or in the fourth period - 'Duḥṣamā-Suṣamā' of the descending cycle of time attains liberation and one born in the fourth period attains liberation in the fifth period also. But those born in the fifth period of the cycle of time do not attain liberation in the fifth period. One does not attain liberation born in other times. In the context of transportation, liberation is attained in all times of ascending and descending cycles of time. With regards to the state of existence, liberation is attained in the context of present stand point in the state of liberation and in the context of past stand point in the human state. From sign point of view, liberation is attained with all the three psychical sex inclinations. From the point of view of physical sex inclination, liberation is attained from the male sex only or from passionless sign. With regards to Lord-ship i.e. 'Tīrtha', some attain liberation as Tīrthaṅkaras and others as common omniscients. The common omniscients attain liberation during the presence or existence of Tīrthaṅkara and some attain after liberation of Tīrthaṅkaras.

With regards to the kind of conduct liberation is attained by the conduct with no name or 'Yathākhyāta' conduct or with four or five kinds of conduct. Some attain liberation by their own inherent capacity (Pratyeka Buddha) and some by teaching of others i.e. Bodhita Buddha.

In the context of knowledge, liberation is attained by omniscience and also by sensory, scriptural knowledge etc. i.e. two, three or four kinds of knowledge. It only means that before manifestation of omniscience, liberated one may have two, three or four kinds of knowledge. Body height is known as 'Avagāhanā'. It is of two kinds - maximum and minimum. The maximum body-height of those who attain liberation is five hundred & twenty-five Dhanuṣa and the minimum is three & half cubits. The person whose body height is seven cubits in the sixteenth year of age, his body height is only three & half cubits at the age of eight years counted since conception. Such a soul can atatin liberation. In between the maximum and minimum body height, there are various variations.

If the liberation of souls is continous without an interval, the minimum of this duration is two instants and maximum eight instants, i.e. the minimum interval when no one attains liberation is one instant and maximum is six months. With regards to number, minimum, one soul gets liberation in one instant and maximum one hundred & eight souls attain liberation in one instant.

The difference in the numbers of the souls distinguished on the basis of place etc. is more or less i.e. Alpabahutva. From the stand point of the present, there is no more or less in the case of souls attaining liberation in the abode of liberated. From the standpoint of the past, this more or less is as follows -

The liberated souls on the region basis are of two kinds - those liberated from their place of birth and those from that to which they have been transported. Liberated by transportation are less and those liberated from the regions of their birth are numerable fold.

Regions are of many kinds - land of action, land of no-action i.e. pleasure land, oceans, continents, the upper world, lower world and the middle world. Very few are the souls liberating from the upper world.

The souls liberating from the lower world are numerable fold. Those liberating from the oceans constitute the smallest number. Those liberating from the Islands are numerable-fold. Those liberated from Lavaṇodadhi are the least. Those liberated from Kālodadhi are numerable fold. Similarly those liberated from Jambūdvīpa, Dhātakīkhanda and Puskararddhadvipa are numerable fold in that order. In the context of time, as more or less souls attain liberation in one instant, there is no more or less. In the context of past stand point, those liberated in ascending cycle of time are less and those attaining liberation in descending period of cycle of time are somewhat more.

With regards to the life-course, in the context of the persent standpoint all attain liberation in liberated life-course and as such there is no more or less. From past stand point also, as all attain liberation from human life-couse, there is no more or less.

From consideration of the life-course prior to the liberated life course, the comparision of more or less is as follows - Tiryañcas life course are less, human life-course is numerable fold. Those from infernal life-course are numerable fold and those from celestial beings are numerable fold.

As regards sex-inclination, all attain liberation, without sex inclination and as such there is no more or less in the context of the present stand point. In the context of the past stand point, those who had psychicalneuter sex inclination are the least of all. Those who had psychical female sex inclination are numerable fold and those who had psychical male sex inclination are numerable fold. It is said, 'those liberated ones who had neuter sex inclination are twenty, those who had female sex inclination are forty and those who had male sex inclination are forty-eight.

In the similar manner, comparison of more or less can be done for 'Tīrtha' i.e. religious fold, conduct etc.

इति तत्त्वार्थसूत्रे दशमोऽध्यायः।

Ends of Tenth Chapter of Tattvārthasūtra.